ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 444-445
ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

भारत में समिति व्यवस्था का प्रारम्भ विकास एवं उसका वर्तमान स्वरूप

शैलेश कुमार राय
प्रवक्ता–नागरिक शास्त्र, श्री सिद्धेश्वर नाथ इण्टर कालेज, कोटवां नारायणपुर, बलिया (उ0प्र0) भारत

Received- 05.08.2020, Revised- 09.08.2020, Accepted - 13.08.2020 E-mail: balarai24533@gmail-com

सारांश : *भारत में "समिति पद्धति' का प्रारम्भ सन् 1854 में होता है। लेजिस्लेटिव कांउसिल (1854–61) ने अपनी 20 मई 1854 की बैठक में अपने 'स्टैडिंग ऑडर' बनाने के लिए 4 सदस्यों की एक समिति नियुक्त की थी। सन् 1856 में एक प्रवर समिति भी नियुक्त की गई थी। इसी लेजिस्लेटिव कांउसिल में एक सम्पूर्ण सदन समिति नियुक्त करने की भी प्रथा थी, जो प्रवर समितियों द्वारा विचार किये जाने पर विधेयकों पर विचार करती थी। इस प्रकार की सम्पूर्ण सदन समिति 1 जुलाई 1854 को गठित की गई थी। उसके बाद कई बार सम्पूर्ण सदन समिति का गठन किया गया। सन् 1862–1920 में वित्तीय विवरण पर विचार करने के लिए लेजिस्लेटिव कांउसिल द्वारा सम्पूर्ण सदन समिति के गठन का उल्लेख गर्वन्मेंट ऑफ इंडिया डिस्पैच 1908 में मिलता है। सम्पूर्ण सदन समिति की ही तरह प्रवर समितियों की प्रथा भी पहले से थी। लेजिस्लेटिव कांउसिल (1851–61) में भी एक प्रवर समिति नियुक्त करने की प्रथा थी, जिसका कार्य कांउसिल के सदस्यों को बचे हुए कार्यों का वितरण करना था।*

कुंजीभूत शब्द– समिति पद्धति, लेजिस्लेटिव काउंसिल, प्रवर समिति, सदन समिति, गठन, हस्तक्षेप, विशेषाधिकार।

आधुनिक काल में भारत संसदीय समितियों की व्यवस्था सन् 1921 में मान्टेगो चेम्सफोर्ड सुधारों की योजना के अन्तर्गत, जो भारत सरकार के अधिनियम 1919 में दी गई थी, के परिणाम स्वरूप हुई थी, लेकिन उन दिनों की समितियों, केन्द्रीय विधान सभा की तरह सरकार के निर्णय तथा उसके हस्तक्षेप से स्वतंत्र नहीं थी। उन्हें कोई शक्तियाँ या विशेषाधिकार प्राप्त नहीं थे। वे अपनी प्रक्रिया स्वयं तय नहीं कर सकती थी और न ही वे अपने आंतरिक कार्यों के लिए स्वयं अपने नियम बना सकती थी। केन्द्रीय विधान सभा के स्थायी आदेशों में 3 समितियों की व्यवस्था की गई थी, वे थी– विधेयकों के संबंध में प्रवर समिति[1] स्थायी आदेशों के संशोधन के लिए प्रवर समिति[2] तथा विधेयकों के संबंध में याचिका समिति।[3]

इसके अतिरिक्त भारतीय विधानसभा नियमों में दो ओर समितियों के गठन की व्यवस्था की गई थी। वे थी– किसी विधेयक के संबंध में संयुक्त–समिति तथा लेखा–समिति।[4] प्रवर समितियाँ विधेयकों पर विचार होते हुए किसी सदस्य के तद्देश्यक प्रस्ताव पारित किये जाने पर नियुक्त हुआ करती थी। जिस विभाग से संबंधित विधेयक होता था, उस विभाग का मंत्री, विधेयक प्रस्तुत करने वाला सदस्य एवं गर्वनर–जनरल की एक्जीक्यूटिव कांउसिल का विधि सदस्य (यदि वह एसेम्बली का सदस्य हो तो), प्रवर समिति के सदस्य नियुक्त किये जाते थे। समिति के अन्य सदस्यों के नाम प्रस्ताव में प्रस्तावित किये जाते थे। यदि विधि मंत्री, समिति का सदस्य होता था, तो उसे ही समिति का सभापति नियुक्त किया जाता था। सबंधित विभाग के मंत्री को सदस्य न होते हुए भी समिति की बैठक में आने का अधिकार होता था। समिति का कोई सदस्य विम्मति टिप्पणी भी दे सकता था। समिति की कार्यवाही गुप्त रहती थी तथा वह अपना प्रतिवेदन सभा के समक्ष प्रस्तुत करती थी।

जिन अवस्थाओं में प्रवर समिति की नियुक्त होती थी उन्हीं अवस्थाओं में संयुक्त प्रवर समिति में दो सदनों के सदस्य हुआ करते थे। इसका सभापति, समिति द्वारा चुना जाता था। इसकी बैठकों का स्थान तथा समय कांउसिल के अध्यक्ष द्वारा निश्चित किया जाता था।

सन् 1922 के नियमों में एक स्थायी आदेशों के संशोधन के लिए प्रवर समिति का भी प्रावधान किया गया था। यह समिति सभा के स्थायी आदेशों पर विचार करने के संबंध में पारित प्रस्ताव के फलस्वरूप नियुक्त की जाती थी। अध्यक्ष इसका सभापति होता था। इस समिति में उपाध्यक्ष तथा सात अन्य सदस्य होते थे। सन् 1921 में लोकसभा में लोक–लेखा समिति की स्थापना की गई। इस समिति में 12 सदस्य थे, जिनमें से 8 केन्द्रीय विधानसभा के गैर सरकारी सदस्यों द्वारा चुने जाते थे। तीन सदस्यों का नाम निर्देशन गवर्नर–जनरल द्वारा किया जाता था तथा वित्त सदस्य इसका सभापति होता था, जिसे निर्णायक मत देने का भी अधिकार था। इस समिति का कार्यकाल 3 वर्ष था। विधानसभा के कार्यकाल के साथ इसका कार्यकाल भी समाप्त हो जाता था। सन् 1933 में भारतीय विधानसभा नियमों में संशोधन करके यह उपबंध किया गया कि जब विधानसभा का कार्यकाल तीन वर्ष की अवधि से अधिक कर

PIF/6.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

दिया जाये, तो तीन वर्ष की इस अवधि की समाप्ति पर नयी समिति का गठन किया जाए, मानों एक नयी विधानसभा का प्रारम्भ हो गया हो।5

भारतीय विधानसभा नियमों के अन्तर्गत सन् 1921 में बनायी गयी समिति के कृत्य सपरिषद् गवर्नर–जनरल के विनियोग लेखों तथा तत्संबंधी लेखा–परीक्षा की जाँच तक ही सीमित थे।6

लोक–लेखा समिति की संवैधानिक स्थिति की परीक्षा सन् 1926 में करायी गयी, जिससे यह निष्कर्ष निकला कि समिति को इस बात का अधिकार है कि वह लेखा–परीक्षा तथा विनियोग संबंधी रिपोर्ट के खर्च, चाहे उसकी मंजूरी विधानसभा देती हो या नहीं या प्राप्तियों के संबंध में महालेखा–परीक्षक की रिपोर्ट पर विचार कर सकती है और उसके संबंध में अपनी राय दे सकती है। सन् 1931 में लोक–लेखा समिति की सिफारिश पर सैनिक लेखा समिति का पुनर्गठन किया गया, जिसके अनुसार उसका सभापति, वित्त सदस्य होता था। इस प्रकार गठित सैनिक लेखा समिति सन् 1947 तक कार्य करती रही।7

सन् 1953 में यह तय किया गया कि राज्य सभा के 7 सदस्य भी इस समिति में शामिल किये जाये, जिसके फलस्वरूप इस समिति की सदस्य संख्या 22 हो गयी। यह समिति प्रत्येक वर्ष गठित की जाती है।

इस अधिनियम के अन्तर्गत एक अन्य समिति की भी स्थापना की गई, जिसे याचिका समिति कहते है। इस समिति का प्रादुर्भाव उस समय हुआ, जब 15 सितम्बर, 1921 को उस समय की राज्य–परिषद में एक सदस्य ने संकल्प प्रस्तुत किया। उस संकल्प में कहा गया कि जनता की याचिकाओं के संबंध में एक समिति की नियुक्ति की जाए, जिसे साक्ष्य लेने की शक्ति प्रदान हो। इस विषय पर सरकार द्वारा नियुक्त एक समिति ने विचार किया। उस समिति ने इस बात को ठीक नहीं समझा कि विधानसभा को वे शक्तियाँ दी जाये, जिनका प्रस्ताव संकल्प में किया गया था, लेकिन उसने यह सिफारिश की कि सार्वजनिक कार्य के संबंध में विधानसभा को याचिका देने का अधिकार दिया जाना चाहिए।8

इस सिफारिश के अनुसार अध्यक्ष व्हाइट ने 20 फरवरी, 1924 को उस समिति का गठन किया।9

सन् 1933 तक इस समिति का नाम 'जनता की याचिकाओं संबंधी समिति' था, उस वर्ष इसका नाम बदलकर 'याचिका समिति' कर दिया गया। प्रथम लोकसभा में यह समिति सर्वप्रथम 27 मई, 1952 को नियुक्त की गई थी। भारतीय विधान मण्डल के सदस्यों के लिए निवास के स्थान और आवास पर विचार करने के लिए 14 सितम्बर, 1927 को विधानसभा में पास किए एक प्रस्ताव के अनुसार एक समिति की नियुक्ति की गई। इस समिति ने अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया और सदस्यों को मकान बांटने का काम उस विभाग ने सम्भाल लिया, लेकिन नवम्बर, 1931 में 55 सदस्यों ने अपने हस्ताक्षर से एक अभ्यावेदन अध्यक्ष को दिया, जिसमें उनका ध्यान इस बात की ओर दिलाया गया था कि सदस्यों को रहने के लिए जो मकान दिए जाते है, वे अनुपर्युक्त और अपर्याप्त है। उस अभ्यावेदन के अनुसार अध्यक्ष ने दलों के नेताओं के परामर्श से 22 फरवरी, 1932 को एक आवास समिति को नाम निर्दिष्ट किया। उसके बाद से अध्यक्ष, समय–समय पर इस समिति का गठन करता रहता है।

इसके बाद सन् 1947 तक 'समिति–पद्धति' में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं आया। इस काल (1922–47) में राजनीतिक वाद–विवाद पर अधिक ध्यान दिया जाता था। सदस्यों को इस बात की कोई चिन्ता नहीं रहती थी कि विधेयक समिति से पारित होता है, या एक ही सभा की समिति से।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, संसद के रचनात्मक ध्येय पर अधिक ध्यान दिया जाने लगा और यह विचार किया जाने लगा कि संसद को किस प्रकार वास्तविक रूप में प्रभुत्व सम्पन्न संस्था बनाया जाए। स्वतंत्रता के बाद संविधान ने संसद को बहुत अधिक अधिकार प्रदान किए, अतएव स्वतंत्रता के पहले संसद–सदस्यों के विशेषाधिकारों या सरकारी आश्वासनों पर निगरानी रखने आदि का प्रश्न ही नहीं उठता था। संविधान के लागू होने के बाद केन्द्रीय विधान मण्डल की स्थिति बिल्कुल बदल गयी और समितियों की व्यवस्था में भी बहुत अधिक परिवर्तन आ गया, न केवल समितियों की संख्या बढ़ गयी, बल्कि उनकी शक्तियाँ एवं कार्य भी बढ़ा दिये गये। इन नवीन परिस्थितियों के परिणामस्वरूप कुछ नयी समितियों का विकास हुआ।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. विधानसभा के स्थायी आदेश, स्थायी आदेश सं. 40.
2. तदैव, सं. 56.
3. तदैव सं. 80.
4. भारतीय विधान सभा, नियम (42), (51).
5. कौल एवं शकधर : संसदीय प्रणाली तथा व्यवहार, 1972, पृं. 801.
6. भारतीय विधानसभा, नियम 1921 के नियम 52(1), (2).

*****

PIF/6.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*